# अपभ्रंश वैयाकरण हेमचन्द्र के दोहे

—डॉ० आदित्य प्रचण्डिया 'दीति', अलीगढ़

पाणिनी की कोटि के महान वैयाकरण होते हुए हेमचन्द्र काव्य-प्रणयन में भी किसीसे पीछे नहीं रहे। वे अपभ्रंश के ही नहीं संस्कृत और प्राकृत के भी कवि कोविद थे। एक व्यक्ति में ऐसी विरोधी रुचियों का समन्वय विलक्षण है। असाधारण प्रतिभा के धनी हेमचन्द्र का आरम्भिक नाम चंगदेव था। जैनदीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् आपका नाम हेमचन्द्र पड़ा। आप श्वेताम्बर जैन थे और गुजरात के सोलंकी राजा सिद्धराज एवं उनके भतीजे कुमारपाल के समसामयिक प्रतिष्ठित पण्डित थे। आप अधिकतर समय अन्हिलवाड़ में रहे।[१] आपका समय संवत् ११४५ से सं० १२२९ तक का है।[२] अपनी प्रखर प्रतिभा के कारण हेमचन्द्र 'कलिकाल सर्वज्ञ' से सम्बोधित हुए।

हेमचन्द्र का बहुमुखी व्यक्तित्व महान् है। आपके 'सिद्ध हेम शब्दानुशासन' ( व्याकरण ) के अतिरिक्त 'लिंगानुशासन' ( व्याकरण ), 'संस्कृत द्वयाश्रय' ( महाकाव्य ), 'प्राकृत द्वयाश्रय' या 'कुमारपाल चरित' ( महाकाव्य ), 'काव्यानुशासन' (अलंकार), 'छंदोऽनुशासन' (छंद शास्त्र), 'अभिधान चिन्तामणि' (कोष), 'अनेकार्थ संग्रह' (कोष), 'देशीनाममाला' (कोष), 'निघंटुकोष'(वैद्यक कोष), 'प्रमाण मीमांसा' (न्याय), 'योगशास्त्र', 'त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र' (महापुराण) आदि अन्य अनेक ग्रन्थ[३] विविध विषयों का निरूपण करते हैं। अपने व्याकरण में जनसाधारण में प्रचलित दोहों को उदाहृत करके[४] आपने लोक साहित्य की महान सम्पत्ति की सुरक्षा की है साथ ही अपभ्रंश काव्य का 'दोहा' काव्यरूप के स्वरूप समझने की प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत की है। दोहा या दूहा अपभ्रंश का लाडला छंद है।[५] हेमचन्द्र के दोहे अपभ्रंश काव्य में महनीय हैं।[६] साहित्यिक सौन्दर्य से सम्पृक्त आपके दोहे अपभ्रंश साहित्य में निरुपमेय निधि है। वस्तुतः अपभ्रंश वाङ्मय के हेमचन्द्र आधार स्तम्भ हैं।

हेमचन्द्र द्वारा उदाहृत दोहों का सरसता, भाव-तरलता एवं कलागत सौन्दर्य की दृष्टि से 'गाथा सप्तशती' के समान ही मूल्य है। इन दोहों में निसर्ग-सिद्ध काव्यत्व की गरिमा निहित है। विषयवस्तु की दृष्टि से ये दोहे वीरभावापन्न, शृंगारिक, नीतिपरक, अन्योक्तिपरक, वस्तु

[१] अपभ्रंश साहित्य, हरिवंश कोछड़, पृष्ठ ३२१।

[२] (क) हिस्ट्री आफ मिडीवल हिन्दू इन्डिया, भाग ३, पृष्ठ ४११।
(ख) जैन साहित्य और इतिहास, नाथूराम प्रेमी, पृष्ठ ४४८।

[३] (क) काव्यानुशासन की भूमिका, रसिकलाल पारीख, पृष्ठ २९१।
(ख) अपभ्रंश पाठमाला, प्रथम भाग, नरोत्तमदास स्वामी, पृष्ठ ९३।

[४] हिन्दी साहित्य की भूमिका, डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ १३।

[५] (क) अपभ्रंश भाषा और साहित्य, डॉ० देवेन्द्र कुमार जैन, पृष्ठ ११७।
(ख) जैन साहित्य की हिन्दी साहित्य को देन, श्री रामसिंह तोमर, प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृष्ठ ४६८।

[६] आदिकालीन हिन्दी साहित्य शोध, डॉ० हरीश, पृष्ठ १५।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्णनात्मक और धार्मिक भेदों में विभक्त किए जा सकते हैं।[७] डॉ० नेमीचन्द्र शास्त्री कहते हैं—"इनमें शृंगार, रतिभावना, नखशिख चित्रण, धनिकों के विलासभाव, रण-भूमि की वीरता, संयोग, वियोग, कृपणों की कृपणता, प्रकृति के विभिन्न रूप और दृश्य, नारी की मसृण और मांसल भावनाएँ एवं नाना प्रकार के रमणीय दृश्य अंकित हैं। विश्व की किसी भाषा के कोष में इस प्रकार के सरस पद्य उदाहरणों के रूप नहीं मिलते।"[८]

हेमचन्द्र के अनेक दोहे हिन्दी साहित्य के आदिकालीन साहित्य का निरूपण करते हुए सुविज्ञ समीक्षकों द्वारा उद्धृत किए गए हैं। हिन्दी साहित्य के इतिहासवेत्ताओं ने क्षत्रिय नारियों की वीरता के आदर्श-आकलन में निम्न दोहा प्रस्तुत किया है :

भल्ला हुआ जु मारिया बाहिणि महारा कन्तु।
लज्जेज्जंतु वयं सिअहुं जइ भग्गा घर अंतु॥

वीर रस के दोहों में नारी की दर्पोक्तियों का विशेष महत्त्व है। डॉ०हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में—"स्त्रियों की अद्भुत दर्पोक्ति जो आगे चलकर डिंगल कविता की जान बन गई, इन दोहों में प्रथमबार बहुत ही दृप्त स्वर में प्रकट हुई है।"[९] नायिका के कथन द्रष्टव्य हैं : ऐ सखि ! बेकार बक-बक मत कर। मेरे प्रिय के दो ही दोष हैं—जब दान करने लगते हैं तो मुझे बचा लेते हैं और जब जूझने लगते हैं तो करवाल को :

महु कन्तहो बे दोसड़ा हेल्लि म झंखहि आलु।
देन्तहो हउँ पर उ-वरिय जुज्झन्तहो करवालु॥

यदि शत्रुओं की सेना भागी है तो इसीलिए कि मेरा प्रिय वहाँ है और यदि हमारी सेना भागी है तो इसीलिए कि वह मर गया है :

जइ भग्गा पारक्कडा तो सहि मज्झुपिएण।
अह भग्गा अम्हत्तणा सो ते मारि अडेण॥

जहाँ वाणों से वाण कटते हैं, तलवार से तलवार टकराती है उसी भट घटा समूह में मेरा प्रिय मार्ग को प्रकाशित करता है :

जहिं कप्पिज्जइ सरिण सरु छिज्जइ खग्गिण खग्गु।
तहिं तेहइ भड घड निवहि कन्तु पयासइ मग्गु॥

जब प्रिय देखता है कि अपनी सेना भाग खड़ी हुई है और शत्रु का बल वर्द्धित हो रहा है तब चन्द्रमा की महीन रेखा के समान मेरे प्रिय की तलवार खिल उठती है और प्रलय मचा देती है :

भग्गउँ देक्खिवि निययवलु वलु पसरिअउँ परस्स।
उम्मिलइ ससिरेह जिवं करि करवालु पियस्स॥

इस जन्म में भी और अगले जन्म में भी, हे गोरि ! ऐसा पति देना जो अंकुश के बन्धन को अस्वीकार कर देने वाले मदमत्त हाथियों से अनायास भिड़ सके :

आयइं जम्महि अन्नहिं वि गोरि सु दिज्जहि कन्तु।
गयमत्तहँ चत्तकुसहैं जो अब्भिडहि हसन्तु॥

वह देखो, हमारा प्रिय वह है जिसका बखान सैकड़ों लड़ाइयों में हो चुका है। वह, जो अंकुश को अस्वीकार करने वाले मत्त गजराजों के कुम्भ-विदीर्ण कर रहा है :

संगर सएहि जु वण्णिअइ देक्खु अम्हारा कन्तु।
अहिमत्तहँ चतङ्कु-सहँ गय कुम्भेहि वारन्तु॥

डॉ० नामवर सिंह वीर रस से पगे-सने दोहों के विषय में कहते हैं—"यहाँ पुरुष का पौरुष ही नहीं, उसके पार्श्व में वीर रमणी का दर्प भरा प्रोत्साहन भी मिलेगा, यदि एक ओर शिव का ताण्डव है तो दूसरी ओर उनके पार्श्व में शक्ति का लास्य भी है।"[१०]

सामान्यतः नारियाँ कामना करती हैं कि किसी तरह मेरे प्रियतम लड़ाई-भिड़ाई के कामों से अवकाश पाकर मेरे आंचल तले सुख-शांति से कुछ दिन बिताएँ। ऐसी

[७] अपभ्रंश काव्य परम्परा और विद्यापति, डॉ० अंबादत्त पंत, पृष्ठ ३५६।
[८] प्राकृत भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ ५४०।
[९] हिन्दी साहित्य का आदिकाल, पृष्ठ ६३।
[१०] हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, पृष्ठ २२४-२२५।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नारियाँ प्रायः दुर्लभ हैं जिन्हें युद्ध के बिना उदासीन महसूसती हो। नायिका का कथन है कि—प्रिय, यह किस देश में आ गए? जब से यहाँ आए हो युद्ध का अकाल पड़ा हुआ है। अरे किसी ऐसे देश में चलो, जहाँ खड्ग का व्यवसाय होता हो। हम तो युद्ध के बिना दुर्बल हो गए और अब बिना युद्ध के स्वस्थ न होंगे।

खग्ग विसाहिउ जहिं लहहुँ पिय तहि देसहिं जाहुँ।
रण-दुब्भिक्खें भग्गाइं विणु जुज्झें न वलाहुँ॥

इस प्रकार हेमचन्द्र के वीर रस के दोहे डिंगल की वीर परम्परा को स्पष्ट करने में सहायक हैं।[११] इन दोहों में वीर रस का अभिनव स्वर भास्वर है, युद्ध-वर्णन विचित्र है, अद्भुत है, योद्धा लड़ते-लड़ते पावों में अपनी अतड़ियाँ उलझ जाने, सिर कंधे पर झूल जाने पर भी तलवार से हाथ नहीं हटाता। उत्साह का यह अद्भुत रूप मात्र युद्ध-क्षेत्र में ही नहीं अपितु जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी परिलक्षित है।

शृंगारिक दोहों की परम्परा 'गाहासतसई' या लौकिक शृंगारिक मुक्तकों से संश्लिष्ट की जाती है। ऐसे बहुत से दोहे हैं जिनमें नायिका स्वयं नायक की वीरता की चर्चा करती है। अनेक दोहे रतिवृत्ति प्रधान होते हुए भी वीर रस पूर्ण दिखाई पड़ते हैं। विशुद्ध शृंगारिक दोहों में नायिका अपनी सखी या दूती से अथवा दूती, सखी या अन्य कोई स्त्री पात्र नायिका से रति वृत्ति को जागरित करने वाले भाव व्यक्त करती है। कहीं स्वयं नायिका पथिक से वाक्चातुर्य के द्वारा गोपनवृत्ति की अभिव्यक्ति करती है। कविश्री हेमचन्द्र अपनी प्रौढ़ोक्तियों के द्वारा आलम्बन, आश्रय, उद्दीपन या अनुभाव मात्र का वर्णन करते दिखाई देते हैं। कहीं नायिका के सम्पूर्ण अंगों का और कहीं उसके विशेष अंगों—मुख, नेत्र, स्तन, कटि आदि का वर्णन करते हैं। हेमचन्द्र द्वारा निरूपित मुग्धा नायिका की खीझ देखते ही बनती है। कविश्री का कथन कि किशोरी के स्तनों के बीच की दूरी इतनी कम है कि उसमें नायक का मन भी नहीं अट सकता। जब ये स्तन इतने उत्तुंग हो जाते हैं कि प्रिय उनके कारण अधरों तक नहीं पहुँच पाता तो बेचारी नायिका अपने अंगों पर खीझ प्रकट करती है। कविश्री हेमचन्द्र की सूझ और कल्पना अत्यन्त चमत्कारी है:

अइ तुंगत्तणु जं थणहं सो छेयउ न हु लाहु।
सहि जइ केम्बइ तुडि-वसेण अहरि पहुच्चइ नाहु॥

रूपकातिशयोक्तियों द्वारा कविश्री हेमचन्द्र ने 'रूप-वर्णन' में सौन्दर्य एवं चमत्कार उत्पन्न कर दिया है। कबरी बन्ध समन्वित मुख सौन्दर्य के वर्णन में कविश्री ने चन्द्रमा और राहु के मल्ल युद्ध की संभावना व्यक्त की है तो भ्रमर कुल के सदृश नायिका के केश ऐसे लग रहे हैं मानो अन्धकार के बच्चे मिलकर खेल रहे हैं। नायिका का प्रिय दोषी है, मन उसका लाचार है, सखी कहने आती तो नायिका नम्रता की नर्मदा में अवगाहन करती हुई कहती हैं कि जब प्रिय सदोष है तो ऐसी बात एकांत में कहो लेकिन ऐसे एकांत में कि मेरा मन भी न जानने पाए क्योंकि वह तो प्रिय का पक्षपाती है। पर नायिका को एकांत कहाँ प्राप्त होता है:

भण सहि निहु अउँ तेव मई जइ पिउ दिट्ठ सदोसु।
जेवँ न जाणइ मज्झु मणु पक्खावडिअं तासु॥

विरह वर्णन में ऊहात्मकता के अभिदर्शन होते हैं। एक कृश तनु वियोगिनी बाला को आँसुओं से चोली को गीली करते हुए और उष्ण उच्छ्वासों से सुखाते हुए दिखाया है। मान सम्बन्धी दोहों में बड़ी मार्मिकता है। कभी नायिका मान करती है तो कभी नायक। प्रियतम को देखने पर हलचल में वह मनस्विनी मान करना भूल जाती है। एक नायिका मान करने का संकल्प करती है और सारी रात ऐसी ही कल्पनाओं में बिता देती है किन्तु जब प्रिय का आगमन होता है तो मन धोखा दे जाता है। मान विरह के अतिरिक्त प्रवासविरह के अनेक उद्धरण मिलते हैं। मान विरह में कृत्रिमता या विलासिता अधिक प्रतीत होती है किन्तु प्रवास-विरह में स्नेह अत्यन्त तप्त और उद्दीप्त हो जाता है। डॉ० नामवर सिंह ने शृंगारपरक दोहों की समीक्षा करते हुए कहा है—"इस तरह प्रणयी जीवन के इन दोहों में वह सादगी, सरलता और ताजगी

[११] हिन्दी साहित्य, डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ २२।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है जो हिन्दी के समूचे रीतिकाव्य में भी मुश्किल से मिलेगी। कला वहाँ जरूर है, चातुरी वहाँ खूब है, एक-एक शब्द में अधिक से अधिक चमत्कृत करने की शक्ति भी हो सकती है मतलब यह कि वहाँ गागर में गागर भरने की करामात हो सकती है लेकिन गागर में सागर जितना ही अमृत भरने की जो चेष्टा यहाँ है, उस पर रीझने वाले सुजान भी कम नहीं है। कठिन काम गागर में सागर भरना हो सकता है लेकिन गागर में अपना हृदय भर देना कहीं अधिक कठिन है। हेम व्याकरण के इन दोहों की स्थिति ऐसी ही है। आर्या और गाहा सतसई की तरह इस दोहावली के भी एक-एक दोहे पर दर्जनों प्रबन्ध काव्य निछावर किए जा सकते हैं।"[१२]

हेम व्याकरण में भ्रमर, कुंजर, पपीहा, केहरि, धवल, महाद्रुम आदि को लेकर बड़ी ही हियहारी अन्योक्तियाँ कही गई हैं। 'भ्रमर' संदर्भित अन्योक्ति द्रष्टव्य है :

भमर म रुणझुणि रण्णउइ सा दिसि जोइ म रोइ।
सा मालइ देसंतरिअ जसु तुहुँ मरहि विओइ॥

अर्थात् हे भ्रमर! अरण्य में रुनझुन ध्वनि मत कर, उस दिशा को देखकर मत रो, वह मालती दूसरे देश चली गई जिसके वियोग में तुम मर रहे हो।

'धवल बैल' सम्बन्धी अन्योक्ति भी मार्मिक बन पड़ी है। अपने स्वामी के गुरुभार (अधिक परेशानी) को देखकर धवल बैल खेद करता है कि मैं ही दो खण्ड करके क्यों न दोनों ओर जोत दिया गया :

धवलु विसुरइ सामि अहो गरुआ भरु पिक्खेवि।
हउँ कि न जत्तउ दुहुँ दिसिहिं खण्डइँ दोण्णि करेवि॥

'महाद्रुम' विषयक अन्योक्ति भी कम महत्त्व लिए नहीं है। चिड़ियाँ महान द्रुमों के सिर पर बैठकर फल खाती हैं और शाखाओं को भी तोड़ डालती हैं फिर भी महाद्रुम उनका कुछ भी अपराध नहीं गिनते :

सिरिं चडिया खन्ति फलइं पुणु डालइं मोडन्ति।
तो वि महद्दुम सउणाहँ फलानि पुनः शाखा मोटयन्ति॥

हेमचन्द्र द्वारा उद्धृत नीति सम्बन्धी दोहों में अभिनव अनुभूति की अभिव्यक्ति है। नीति के ये उपदेश जीवन के व्यवहार से सम्बन्धित हैं। इनकी अभिव्यञ्जना के लिए कविश्री ने उपयुक्त दृष्टान्त प्रस्तुत किए हैं :

सामरू उप्परि तणु धरइ तलि घल्लइ रयणाइं।
सामि सुभिच्चु वि परिहरइ संमाणेइ खलाइं॥

अर्थात् सागर तृणों को तो अपने ऊपर धारण करता है और रत्नों को भीतर तल में डालता है, स्वामी सुभृत्य की तो उपेक्षा करता है किन्तु खलों का सम्मान करता है।

महत्त्वाकांक्षियों के आदर्श का निरूपण करते हुए कविश्री का कथन है कि कमलों को छोड़कर भ्रमर समूह हाथियों के गण्डस्थल से मद पान करने की आकांक्षा रखते हैं और वहाँ जाते हैं। दुर्लभ को प्राप्त करने की जिनकी इच्छा रहती है, वे दूरी को कुछ भी नहीं समझते।

कमलइं मेल्लवि अलि-उलं करि-गंडाइं महंति।
अ-सुलह-मेच्छण जाहं भलि तेण वि दूर गणंति॥

इस प्रकार अपभ्रंश वैयाकरण हेमचन्द्र ने अपने 'शब्दानुशासन' में वीर, शृंगार तथा अन्य रसों से अनुप्राणित दोहों को व्याकरण के नियमों को समझाने हेतु व्यवहार में लिया है। जिसमें कहीं नीति सम्बन्धी उक्तियाँ हैं तो कहीं धार्मिक सूक्तियों या अन्योक्तियों का समायोजन हुआ है। इन दोहों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, विभावना, हेतु, अर्थान्तरन्यास, दृष्टान्त, उदाहरण आदि अलंकारों के सुन्दर विनियोग से काव्य-सौन्दर्य का उत्कर्ष परिलक्षित है। इनसे गोरखनाथ, संत कबीर आदि परवर्ती कवियों ने प्रेरणा ग्रहण की है। हेमचन्द्र युग की अपभ्रंश भाषागत एवं साहित्यिक प्रवृत्तियों को समझने की दृष्टि से इन दोहों की महत्ता असंदिग्ध है।

अपभ्रंश काव्य में धार्मिक साहित्य की प्रचुरता के मध्य वीर और शृंगार रस के इतने उत्कृष्ट छंद उसके साहित्यिक गौरव के उत्कर्ष विधायक हैं। धार्मिक क्षेत्र से दूर ये दोहे लौकिक अपभ्रंश काव्य की मनमोहक झांकी प्रस्तुत करते हैं। वस्तुतः हेमचन्द्र के दोहे अपभ्रंश वाङ्मय में मुक्तक काव्य के सफल वाहन हैं।

[१२] हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, पृष्ठ २२८।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org